International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 10; October 2016; Page No. 202-204

सामाजिक त्रासदी का शिकार युवा वर्ग और बचाव के उपाय

डा. सुदर्शन राठी

ऐसोशिएट प्रोफेसर हिन्दी, महाराजा अग्रसेन महिला महाविद्यालय, झज्जर, हरियाणा, भारत।

सारंश

प्रस्तुत शोध पत्र में अंधी गलियों में भटकते युवा वर्ग के प्रति चिंता दर्शान का प्रयास किया गया है। आज का युग जहॉ विचारों के अंगीकरण, औद्योगिक क्रान्ति, सूचना तन्त्र के विकास, आवागमन के साधनों, राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक व्यवस्था, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की संस्कृति से संघर्ष, नित नयी वैज्ञानिक खोजों का युग है, वहीं तीव्र गति से आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा, माता–पिता की बच्चों के बढ़ती महत्त्वाकांक्षा, भागा–दौड़ी के युग में युवा वर्ग में तनाव, आक्रोश, घुटन, संत्रास, मन–मुटाव, अलगाव का भाव भी बढ़ता जा रहा है। दिन पर दिन हत्या, मार–काट, लूट–पाट, छीना झपटी, विवाह–विच्छेद और आत्महत्या जैसी घातक सामाजिक त्रास्दियाँ युवाओं को खोखला करती जा रही हैं। युवा वर्ग अनेक शारीरिक व मानसिक रोगों का शिकार होता जा रहा है। निरन्तर पैसे का चुम्बक उन्हें अपनी ओर खींचता जा रहा है। युवा संस्कार विहीन होते जा रहे हैं। संयुक्त परिवार तो टूट ही चुके हैं, एकल परिवार भी दरकते जा रहे हैं। लगभग अधिकतर परिवार एक छत के नीचे रहते हुए भी आधे–अधूरे हो चुके हैं। युवा अनेक प्रकार के नशे का शिकार होकर अंधी गलियों में खो चुका है।

मूल शब्द: सामाजिक त्रासदी, शिकार युवा, उपाय

प्रस्तावना

आज का युग जहॉ विचारों के अंगीकरण, औद्योगिक क्रान्ति, सूचना तन्त्र के विकास, आवागमन के साधनों, राजनीतिक व्यवस्था, आर्थिक व्यवस्था, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की संस्कृति से संघर्ष, नित नयी वैज्ञानिक खोजों का युग है, वहीं तीव्र गति से आगे बढ़ने की प्रतिस्पर्धा, माता–पिता की बच्चों के बढ़ती महत्त्वाकांक्षा, भागा–दौड़ी के युग में युवा वर्ग में तनाव, आक्रोश, घुटन, संत्रास, मन–मुटाव, अलगाव का भाव भी बढ़ता जा रहा है। दिन पर दिन हत्या, मार–काट, लूट–पाट, छीना झपटी, विवाह–विच्छेद और आत्महत्या जैसी घातक सामाजिक त्रास्दियाँ युवाओं को खोखला करती जा रही हैं। युवा वर्ग अनेक शारीरिक व मानसिक रोगों का शिकार होता जा रहा है। निरन्तर पैसे का चुम्बक उन्हें अपनी ओर खींचता जा रहा है। युवा संस्कार विहीन होते जा रहे हैं। संयुक्त परिवार तो टूट ही चुके हैं, एकल परिवार भी दरकते जा रहे हैं। लगभग अधिकतर परिवार एक छत के नीचे रहते हुए भी आधे–अधूरे हो चुके हैं। युवा अनेक प्रकार के नशे का शिकार होकर अंधी गलियों में खो चुका है।

''मोबाइल की दुनिया में क्रांतिकारी बदलाव हुए। उससे इंटरनेट जुड़ गया और स्मार्टफोन आम लोगों की पहुंच में आ गया। कुछ दुर्गम इलाकों को छोड़ दें तो आज महानगर से गांव तक कोई क्षेत्र ऐसा नही है जहां स्मार्टफोन और इंटरनेट के पहुंचने का सबसे ज्यादा असर दो चीजों पर पड़ा। एक तो सामाजिकता और दूसरी अभिव्यक्ति की आजादी। फेसबुक, ट्वीटर, व्हाट्सएप और दूसरे तमाम सोशल माध्यम हमारे मोबाइल और कंप्यूटर–लैपटॉप का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं, इन सबने एक तरफ हमें अभिव्यक्ति की असीम आजादी दी है तो दूसरी तरफ हमारी सामाजिकता को कमजोर भी किया है। अब हम अपनी आभासी दुनिया में ही इतना रमे रहते हैं कि अपने पड़ोस तक की खबर हमें नहीं रहती। दूसरी तरफ हजारों किलोमीटर दूर रहने वालों के सुख–दुख में हम भागीदार भी रहते हैं।''[1] यह इस माध्यम का विरोधाभास है या मानव स्वभाव का, कहना मुश्किल है, लेकिन इस सच्चाई से इनकार करना मुश्किल है कि आभासी सोशल माध्यमों ने हमारे पारंपरिक समाज को गहरे तक प्रभावित किया है। अब प्रेम, दोस्ती, रिश्ते–नाते भी इसी आभासी माध्यम पर बनते–बिगड़ते देखे जा रहे हैं। इसमें कुछ सफल होते हैं, तो कुछ असफल। असफलता में आदमी हताशा के गहरे गर्त में चला जाता है और इतना अकेला पड़ जाता है कि आसपास उसे कहीं कोई सहारा नजर नहीं आता। सोशल माध्यमों के ऐसे तमाम किस्से हम आए दिन सुनते रहते हैं। हद तो तब हो जाती है कि सोशल मीडिया पर घोषणा करके लोग आत्महत्या तक कर जाते हैं।

जब हमारा कोई अपना हम से बिछड़ता है या कोई दुर्घटना हो जाती है तो कई बार हम टूट जाते हैं और इस कदर बिखर जाते हैं कि उस असीम दुःख से बाहर निकलने का कोई रास्ता दिखाई नहीं देता। ऐसी स्थिति में, व्यक्ति पहले तो सदमे यानि शॉक में आ जाता है और कुछ समझ नहीं पाता कि यह क्या हो गया, कैसे हो गया। उसके मन–मस्तिष्क सुन्न हो जाते हैं और बुद्धि काम करना बंद कर देती है। भीतर पीड़ा का रक्त बहने लगता है और दुःख के गहरे घाव हो जाते हैं। कभी–कभी तो कुछ लोगों को इस अवस्था में दिल का दौरा भी पड़ जाता है और मृत्यु होने तक की भी नौबत आ जाती है। कई लोग अचेत या बेहोश हो जाते हैं और कई दिन तक होश नहीं आता तो किसी को ब्रेन हेमरेज हो जाता है। सारा शरीर इतना बेजान हो जाता है कि कुछ करने या सोचते–समझने की शक्ति भी खत्म हो जाती है।

दूसरी अवस्था में, जब कुछ समझने की स्थिति आती है तो उसे बहुत गुस्सा आता है। मन में क्रोध की अग्नि जलने गलती है। क्रोध के साथ–साथ कभी दीनहीनता, असहायता के भाव भी आ जाते हैं। भीतर बेबसी, क्षोभ, आक्रोश का लावा फूट पड़ता है कि ऐसा क्यों हुआ? ऐसे में व्यक्ति पागल भी हो सकता है, क्षणिक आवेश में किसी का खून भी कर सकता है या किसी मानसिक रोग का भी शिकार हो सकता है। किंतु दूसरी ओर असहायता की चरम अवस्था या भीषण ठेस में हो सकता है कि ईश्वर की शरण में जाकर कोई रत्नाकर डाकू से वाल्मीकि बन जाए या पत्नी से निरादर पाकर तुलसीदास या कालिदास बन जाए।

तीसरी अवस्था में, जब क्रोध की अग्नि कुछ शांत होती है तो वह परिस्थिति को अस्वीकार करने लगता है कि नहीं, नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। वह विगत घटना और वर्तमान क्षणों में पेंडुलम की

भांति विचरण करता रहता हैं पर परिस्थिति को लगातार नकारता रहता है कि ऐसा नहीं हो सकता। उसे लगता है मानो उसका दम भी घुट जाएगा। वह कभी जार–जार रोता है तो कभी सिर पटकता है। हम ज्यादातर सुनते हैं कि चाहे जो भी स्थिति–परिस्थिति हो, ईश्वर का सिमरण कभी न छोड़ों, पर हमेशा ऐसा नहीं हो पाता। उसके भीतर शिकायत का जन्म होता है। ऐसे में कभी–कभी व्यक्ति की ईश्वर की सत्ता, उसकी कृपा को मानने से इंकार कर देता है क्योंकि उसे लगता है कि यदि सब कुछ ईश्वर के हाथ में है तो उसने मेरे साथ ऐसा क्यों किया। वह तो मेरा सबसे अच्छा दोस्त था। फिर उसने मुझे धोखा क्यों दिया! यह शिकायत उसे ईश्वर के सामने झुकने, ध्यान करने से रोक देती है। फिर व्यक्ति शिकायत किससे करता है और कौन करता है? जिसने उसकी सत्ता को, उसकी कृपा को, उसकी शरण को हमेशा सर्वोपरि माना हो, तब शिकायत करना उसका अधिकार बनता है। कई बार बहुत समय लग जाता है इस स्थिति से उबरने में। न कोई मंत्र काम आता, न जाप किया जाता, बस एक गहन अंधकार, एक चुप्पी भीतर जन्म लेती है, जहाँ कोई दिशा, कोई मार्ग कहीं नहीं जाता। तब कभी–कभी अशोक चण्ड बन जाता है और अहिंसक अंगुलिमाल।

चौथी अवस्था में, व्यक्ति इस हाल में आ जाता है कि वह उस घटना, दुर्घटना, स्थिति और परिस्थिति को स्वीकार करने लगता है। धीरे–धीरे उसे समझ में आने लगता है कि उसके साथ क्या हो गया और जो हो गया उसे बदला नहीं जा सकता। अब यहाँ से उसे एक नई शुरूआत करनी होती है, जो एक बड़ा ही कठिन मोड़ होता है। बीती यादें बार–बार उसके पैरों को बेड़ी की तरह जकड़ लेती हैं। उसे अहसास होने लगता है कि अब न इंसान उसके साथ है और न भगवान। दोनों ने ही उसे छला है। भीतर यही शोर उठता है और बहुत उद्दाम लहरों जैसा होता है कि तुम तो सर्वशक्तिमान थे, फिर भी तुमने इसे रोका क्यों नहीं। तब प्रश्न उठता है कि क्या, ईश्वर सचमुच हमें सुख–दुखः से मुक्ति दिलाते हैं या हमें हमारे कर्मों का फल देते हैं यश ईश्वर का उनसे कुछ लेना–देना नहीं। ''हमारे कर्म, हमारे विचार, हमारी चाहतें ही ऐसा ताना–बाना बुनते हैं कि उनके मकड़ जाल में हम खुद ही फंस जाते हैं। ऐसे में कभी–कभी कुछ लोग विक्षिप्त हो जाते हैं, अवसाद, विषाद या डिप्रेशन में चले जाते हैं, किसी को पक्षाघात हो जाता है तो किसी को हृदयाघात।''[2]

यह शिकायत भी, यह पीड़ा भी, ये आंसू भी, यह असहायता भी तो मेरी दृष्टि में प्रार्थना का ही एक रूप है, पर एक अलग तरह की प्रार्थना, जिसे प्रायः नकार दिया गया है क्योंकि 'तुमने मेरे साथ ऐसा क्यों किया की शिकायत करते हुए व्यक्ति जब रोता है, चीखता है, चिल्लाता है, सिर पटकता है या भावशून्य या चेतना शून्य हो जाता है तो उसका आक्रोश तो दीखता है पर उसकी पीड़ा नहीं दीखती। ये सब बहुत उग्र तो होता है पर भीतर ही कहीं उसका रुदन भी यह भी कह रहा होता है कि अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊं? क्या यह भी ईश्वर प्रणिधान या समर्पण का ही एक अलग रूप नहीं, जिसे प्रायः अनदेखा कर दिया जाता है। यह एक मोहभंग की–सी स्थिति है। अब वह जो आरती गाता था, मंत्र–जाप करता था, तीर्थों–मंदिरों में जाता था, भजन गाता था, सब बेमानी हो जाता है, झूठ हो जाता है। पर कौन जाने, जीवन का यह मोड़ ही साकार से निराकार की ओर मुड़ने का मोड़ हो।

यह जीवन का वह सबसे दुर्गम मोड़ होता है, जिसमें किसी के लिए एक रास्ता आत्महत्या या आत्मदाह की ओर जाता है तो दूसरा रास्ता, अपने या दूसरों के विनाश की ओर ले जाता है। ऐसे में व्यक्ति अपने आपको नशे या दूसरी बुरी आदतों में डुबो देता है या अपराधी बन जाता है। आजकल समाज में हर उम्र हर वर्ग, वर्ण, लिंग और व्यवसाय से संबंधित लोगों द्वारा आत्महत्या करने की खबरें रोज़ पढ़ने–सुनने को मिलती हैं। आत्महत्या करना सरल नहीं, किंतु यह एक ऐसा क्षणिक आवेग होता है, जिसमें व्यक्ति को अपनी संवेदनाओं पर नियंत्रण नहीं रहता। आत्महत्या इस बात का द्योतक है कि हम अपने वर्तमान जीवन से न संतुष्ट है, न प्रसन्न। पर आत्महत्या से वह संतुष्टि, वह प्रसन्नता प्राप्त हो जाती है कि नहीं, कौन जाने क्योंकि प्रसन्नता और संतुष्टि पाने के लिए जीवित रहना भी तो जरूरी है। योग की दृष्टि से देखें तेा योग के मार्ग पर देह का त्याग या अंत नहीं है, अपितु आत्म–परिवर्तन है, जिसमें जीवन जीने की पुरानी शैली को त्याग कर योग रूपी जीवन जीने की कला को अपनाना है। किंतु एक तीसरा रास्ता भी है, जो हर तरह की प्रतिकूलताओं में भी धीरज, संयम, सौम्यता धारण करने का साहस देता है और व्यक्ति परिस्थिति की सच्चाई को स्वीकार करके अपने लिए ऊंचे लक्ष्य निर्धारित कर लेता है। वे स्वयं से संबंधित भी हो सकते हैं, जैसे सुधा चंद्रन ने अपना पॉव कट जाने के बाद फिर से नृत्य करना शुरू किया, अरूणिमा सिन्हा ने पाँव कट जाने पर भी फिर से हिम्मत जुटाई और एवरेस्ट पर सफलता–पूर्वक चढ़ाई की। वह यहीं नहीं रुकी, बल्कि और भी कई पर्वतों पर सफलता–पूर्वक आरोहण किया। या फिर कुछ लोग अपने दुःख से उत्पन्न पीड़ा को पीकर अपने जैसे दूसरे दुःखी जन की पीड़ा दूर करने के लिए अपना जीवन समाज को अर्पित कर देते है। जैसे, मुँह पर तेज़ाब फेंके जाने की घटना की शिकार लक्ष्मी अग्रवाल ने किया, जो अपने जैसी महिलाओं की सहायता के लिए एक संगठन चला रही है। पर कभी कोई इस पीड़ा को इतना महान् रूप दे देता है कि पूज्य हो जाता है। जैसे, राजा राम मोहन राय ने अपनी भाभी के दुःख से पीड़ित होकर सती प्रथा को ही खत्म करने का बीड़ा उठाया और उसे अंजाम तक पहुंचाया।

इसीलिए आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि ''माता पिता Intelligent quotient (IQ) से पहले खुद को Emotional Quotient (EQ) की दृष्टि से मजबूत करें और अपने बच्चों के EQ पर ध्यान दें क्योंकि EQ के बिना IQ बेकार है। साथ ही Adversity Quotient (AQ) पर भी काम करना होगा, वरना कमजोर के EQ व AQ, IQ को खा जाएंगे। कमजोर EQ और AQ वाले जिंदा रह कर भी मृत तुल्य जीवन जीते हैं, पर महान् आत्मा वालों पर जब आघात होता है तो परिणाम मानव कल्याण में होता है।''[3] जैसे शिव के क्षोभ से, दुःख से, पीड़ा से ताण्डव जैसे नृत्य का आविर्भाव हुआ, शिव ताण्डवस्त्रोतम् जैसी अद्भुत रचना की रावण ने, सत्ती के अंग जहाँ–जहाँ गिरे, वहाँ– वहाँ शक्तिपीठ बन गए जो लोगों की आस्था के केन्द्र बने। तुलसीदास और वाल्मीकि हमें रामचरितमानस तथा रामायण जैसी कालजयी रचनाएं देते हैं जो हमें सिखाती हैं कि कैसे विपरीत से विपरीत परिस्थिति में भी धीरज, संयम, सौम्यता से विकट से विकट परिस्थिति को भी अपने अनुकूल बना सकते हैं। जैसे राम बनवास और सीता हरण की घटनाओं ने राक्षसों का नाश कराया।

हाँ, यह सब इतना सरल नहीं आचरण में, जितना कहना क्योंकि जब इधर किसी भी व्यक्ति या वस्तु के प्रति हमारी गहन आसक्ति को ठेस लगती है तो उधर हमारे आस्था जनित अहंकार को चोट लगती है। ये एक ही सिक्के के दो पहलू हैं तथा इनकी क्रिया–प्रतिक्रिया दोनों साथ–साथ होती है और इनकी परिणति क्रोध में होती है। कह सकते है। कि योग साधना में आसक्ति, सेवा से अहंकार और स्वाध्याय से क्रोध का हनन होने लगता हैं। पर यह सारी प्रक्रिया उतनी ही पीड़ादायक होगी, जितनी गहरी आसक्ति होगी। जैसे एक शिशु को जन्म देते समय माँ को घनीभूत प्रसव पीड़ा होती हैं, वैसी ही पीड़ा स्वयं को जन्म देने की प्रक्रिया में भी होती है। पर जब बार हम स्वयं को नया जन्म देने की प्रसव पीड़ा से गुजर जाते हैं तो हमारे अपने भीतर से भी एक ऐसे शिशु का जन्म होता है जो एकदम भोला है, मासूम है, आसक्ति, अहंकार और

क्रोध रहित है और यह नवजात शिशु अपनी आँखों में नई चमक लिए मानो गा उठता है।
युवाओं में वह शक्ति है जो दुनिया बदलने की शक्ति रखती है। पूरा संसार उनकी ओर आशा भरी नजरों से देखता है। आज आवश्यकता है युवाओं को परमात्मा, योग से जुडने की।
धन्यवाद।

संदर्भ ग्रंथ सूचि

1. कादाम्बिनी, जून 2016, पृ. 11।
2. योग मंजरी, जुलाई–सितम्बर 2016, पृ–1।
3. वहीं, पृ–4।